© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
International Journal of Scientific Research in Science and Technology

विद्यानिवास मिश्र के निबन्धों में पौराणिक कथानकों की प्रासंगिकता

डॉ. सुशील उपाध्याय
प्राचार्य,
चमनलाल डिग्री कॉलेज लण्ढ़ौरा रूड़की, हरिद्वार, भारत।

शशिकला राव
शोधार्थी (हिन्दी), हिन्दी एवं भाषा विज्ञान विभाग,
उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार, भारत।

सारांश – पुराण प्राचीन होकर भी नवीन रहने वाले ग्रंथ है। इन ग्रंथों में लोक कथाओं के माध्यम से नये–नये भावार्थों को निकालकर साधारण जनमानस को मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदनशील बनाने का प्रयास किया गया है। इन ग्रंथों में देवी–देवताओं से सम्बन्धित अनेक कथाएं समाहित है। सती की कथा, उनके सती होने की कथा, शिव के विश्वनाथ बनने की कथा, कृष्ण के जन्म और उनके लीलाओं की कथा, देवी पुराण में देवी के विभिन्न रूपों की उत्तपत्ति की कथा आदि आख्यानों से पुराणों का भण्डार भरा हुआ है।
मुख्य शब्द – विद्यानिवास मिश्र, निबन्ध, पौराणिक, कथानक।

पुराणों को प्रसिद्ध ललित निबन्धकार विद्यानिवास मिश्र ने अपनी रचनाओं में नवीन रूप में आख्यानों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। पौराणिक आख्यानों से लिये गये कथाओं को निबन्धों में उल्लेखित कर वर्तमान में उनके प्रासंगिकता को बनायें रखनें का प्रयास किया है।

पुराणों में धर्म–कर्म, आराधना, रीति–रिवाज वैदिक साहित्य से भिन्न वर्णित है। वर्ण व्यवस्था, जातिगत भेदभाव के प्रत्ति पुराणों में आचार–विचार, पूजा, व्रत अनुष्ठान के रूपों में परिवर्तन कर नई मान्यताओं को स्थापित किया।

पुराणों के सम्बन्ध में हिन्दु धर्म के प्रतिष्ठापक कुरीतियों के विरोधी महान राष्ट्र नायक स्वामी विवेकानन्द का कथन है कि – ''प्रत्येक पुराण का मूलाधार कोई न कोई ऐतिहासिक सत्य है। पुराणों का उद्देश्य है– मनुष्य को सूक्ष्म सत्य का उसके विभिन्न रूपों में परिचय कराना और यदि उनमें कोई ऐतिहासिक सत्यता न हो तो भी वे अपने द्वारा उपदिष्ट सर्वोच्च सत्य के सम्बन्ध में प्रमाण स्परूप है। उदाहरण के लिए रामायण को ही ले चरित्र निर्माण की दृष्टि से उसका अध्ययन करने के लिए यह आवश्यक नही की राम नाम का व्यक्ति कभी हुआ ही हो।

रामायण या महाभारत के प्रतिपाद्य सत्य की प्रमाणिकता केवल राम और कृष्ण के व्यक्तित्वों पर निर्भर नहीं करती''[1]।

पुराण शब्द का शाब्दिक अर्थ पुराना या प्राचीन होता है। इस कारण से पुराण में वे ग्रंथ आते है जिनमें प्राचीन अनुभव, आख्यान, चिन्तन आदि आते है। पुराण को इतिहास भी कहा जाता है। पुराण में गहन विद्या, देवी–देवता,

राजा, ऋषि मुनियों की वंशावली, लोक कथाएं, तीर्थ, मंदिर, चिकित्सा, व्याकरण, विज्ञान, प्रेमकथा, धर्म शास्त्र के अतिरिक्त अनेक विषयों का समायोजन है। पुराण में विषय वर्णन की कोई सीमा नही है। पुराणों में वैदिक युग से चले आ रहे सृष्टि देवी–देवता आदि से सम्बधित विचारों के साथ–साथ लोक श्रुत कल्पित कथाओं का रोचक वर्णन किया गया है।

''पुराण शब्द प्राचीन आख्यान या पुरानी कथा के संज्ञा के रूप में जाना जाता है।'' पुरा शब्द का अर्थ है– अनागत एवं अतीत। 'अण' शब्द का अर्थ होता है– कहना या बतलाना। रघुवंश में पुराण शब्द का अर्थ है'' पुराण पत्रागम् माजन्नतरम्'' एवं वैदिक वाड.मय में 'प्राचीन वृतान्त' दिया गया है।''2

हिन्दू संस्कृति के मूल ग्रंथ जो सृष्टि की रचना से प्रलय तक का वर्णन है, उन्हें सांस्कृतिक दृष्टि से पुराण कहा जाता है। वेदों में जो ज्ञान की जटिलता है, पुराण में इसे सरल शब्दों में समझाया गया है। पुराणों में हिन्दू धर्म से संबंधित देवी–देवताओं को साध्य मानकर धर्म–अधर्म, पाप–पुण्य, कर्म–अकर्म पर आधारित आख्यान है। निर्गुण ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए सगुण साकार की आराधना का विधान है। पुराणों में मानवीय गुणों, प्रेम, दया, भक्ति, सेवा, त्याग सहनशीलता आदि जिनकी अनुपस्थिति में सभ्य समाज की कल्पना भी नही की जा सकती, का देवी–देवताओं को माध्यम बनाकर मनुष्यों को प्रेरित करने वाली अनेक कहानियां है। निबन्धकार मिश्र ने देवी महापुराण से एक कथा प्रसंग का वर्णन करते हुए लिखा है– ''राधा के उद्भावना की एक मिथकीय उत्पत्ति देवी महापुराण में मिलती है। राम के अश्वमेघ यज्ञ में सीता के स्थान पर एक सीता की स्वर्णमयी प्रतिकृति स्थापित की, पत्नी के बिना यज्ञ नहीं किया जा सकता, यज्ञ पूरा हुआ तो राम ने उस प्रतिकृति को विसर्जित करने का मंत्र पढ़ा, प्रतिकृति बिगड़ गई, मैंने तुम्हारा साथ दिया, अब तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊॅगी, मेरा भाग्य जगा कि राम की साझेदारी मिली, मैं अलग नहीं हूॅगी। राम ने बहुत मनाया पर वह न मानी। अन्त में राम को विवश होकर यह आश्वासन देना पड़ा कि मेरे अगले जन्म में तुम राधा होगी और तब तुम नित्य से युक्त रहोगी, हॉ तुमने इतनी जिद ठानी, इसीलिए तुम नित्य वियुक्त भी रहोगी।''[3]

निबन्धकार विद्यानिवास ने पुराण की अनेक कहानियों को अपनी रचनाओं में नये सन्दर्भो में प्रस्तुत किया है। अपने निबन्ध 'लाओं अपना अहंकार डाल दो' में मिश्र जी ने शिव पार्वती संवाद के माध्यम से देवी–देवताओं के साथ मनुष्यों को भी आलस्य दूर रहने तथा सदैव कार्यशील रहने की प्रेरणा देते है– ''पार्वती छेड़ती है कि आप देवताओं को सताने वालों को इतना प्रतापी क्यों बनाते है? शिव अट्टहास कर उठते है उन्हें प्रतापी न बनाए तो देवता आलसी हो जाए, उन्हें झकझोर ने के लिए कुछ कौतुक करना पड़ता है।[4]

'पौराणिक सन्दर्भ कोश' में पुराणों के सन्दर्भ में उल्लेख है, पुराण का शब्दार्थ है अनादि तथा सदा रहने वाला, पुराणों का प्रादुर्भाव ब्रह्म के मुख्य से माना जाता है। जिन्हें कलयुग में मन्द बुद्धि वालों के लिए व्यास ने अष्टादश पुराणों, उपपुराणों में विभक्त करके समझाया। पदम पुराण में, पुराणों को भगवान विष्णु का विग्रह बताया गया है। वहॉ वह भी बताया गया है कि पुराण आदि ज्ञान है और उनके रचयिता ब्रह्मा है।

''पुराण सर्वम् शास्त्राणाम् प्रभनन्, ब्रह्मवा स्मृतम्, उत्तमम् सर्वलोकानाम्।''[5]

'पुराण' के लक्षण इस प्रकार हैं– सर्ग, सात्विकी, राजसी, तामसी, शक्तियॉ, लक्ष्मी, सरस्वती तथा काली रूप में परिणत हुई है और उनके देहरूप धारण लक्षण ही सर्ग है। सृष्टि, स्थिति, संहार, मूर्ति, ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर की उत्पत्ति प्रतिसर्ग है। देवताओं की वंश परम्परा का प्रतिपादन ही वेश है। स्वायं भूय मनु से लेकर चौदह मनुओं की उत्पत्ति समय निर्धारण आदि मन्वन्तर हैं। स्वायंभूव आदि मनुओं की वंश परम्परा का चरित ही वंशानुचरित हैं। पुराण सात्विक, राजस और तामस तीन प्रकार के हैं। इसी को दृष्टि में रखकर ही इन्हें विष्णु, ब्रह्म और शिव से सम्बंधित कह सकते हैं। प्रथम पुराण ब्रह्म पुराण हैं। सात्विक प्रधान पुराण विष्णु नारदीय भागवत गरूड़, पदम वराह। राजस प्रधान पुराण है– ब्रह्म ब्रह्मवैवर्त, ब्रह्मांण्ड, मार्कण्डेय, भविष्य और वामन, तामस प्रधान पुराण है– मत्स्य, कूर्म, लिंग, शिव, स्कन्ध और अग्नि।''[6]

पुराणों की संख्या अट्ठारह मानी गयी है, अट्ठारह पुराणों के नाम एक पारम्परिक श्लोक में इस प्रकार गिनाये गये हैं–

मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं वचतुष्टयम्।
अनालिङ्.गकूसकानि पुराणानि पृथक् पृथक्।।

अर्थात् दो पुराणों के नाम मकार से आरम्भ होने हैं– मार्कण्डेय और मत्स्य दो के भकार से आरम्भ होते हैं– भविष्य तथा भागवत, तीन के नाम ब्र से आरम्भ होते है– ब्रह्माण्ड, ब्रह्म तथा ब्रह्मवैवर्त, चार के वाम में आद्याक्षर व है– वामन, विष्णु, वराह, वायु, अ से अग्नि ना से नारद, प से पद्म, लिंड्ग से लिङ् ग से गरूण, कू से कूर्म और एक एकंद – इस प्रकार अट्ठारह पुराण होते है।[7]

हर पुराण के नामकरण और रचना का कोई प्रयोजन और कारण था। भागवद पुराण के रचना की कथा के बारे में बताते हुए देवदत्त पटनायक लिखते है – ''भागवद् पुराण की कहानी दिलचस्प है। अर्जुन के बेटे का नाम था अभिमन्यु और अभिमन्यु के बेटे का नाम था परीक्षित और परीक्षित को एक तक्षक नामक सॉप ने डस लिया। वे जब मर रहे थे तो उनको बहुत दुःख हो रहा था कि मैं क्यूँ मर रहा हूँ? मैंने क्या गलती की है? इस जिन्दगी का क्या मतलब है? वो मानव के अस्तित्व के बारे में परेशान थे। तब सुकमणि उनके पास आए जो व्यास मुनि के बेटे थे। सुक का मतलब है तोता। सुकमणि तोते की तरह जो उनके पिता ने परीक्षित को बता देते हैं। वे भागवद् पुराण की कथा बताते हैं, कृष्ण के बचपन की कहानियॉ, रास–लीला की कहानियॉ, उनका जीवनी इत्यादि। ये कहानियॉ सुनने के बाद परिक्षित शान्त हो जाते हैं और उन्हें मृत्यु से डर नहीं लगता।''8

पौराणिक सांस्कृतिक परम्परा के ज्ञाता विद्या निवास मिश्र ने अपनी कृतियों में पौराणिक कथाओं, देवी, देवताओं का उल्लेख किया है। मिश्र जी 'भारतीय मन का अकेलापन' में पौराणिक तथ्यों का उल्लेख करते हुए लिखते हैं– ''यह अकेलापन उस दुष्यन्त का अकेलापन है, जो इन्दु की सहायता से असुरों पर विजय करता है और उसका ही लड़का अपनी मॉ से कहता है– मॉ यह आदमी कौन है जो मुझे पुत्र–पुत्र कहे चला जा रहा है? यह अकेलापन इस कृष्ण का अकेलापन है जो युद्ध में शरीक होकर भी युद्धरत नहीं है, जो यादवों के गृह युद्ध से अलग है, इतने बड़े परिवार में रहते हुए एकाकी है, अपनी लीला के अन्तिम क्षण में एकदम अकेले है। साथी उद्धव को विदा कर देते

हैं, सारथि दारूक को विदा कर देते हैं, रथ घोड़े सब लौटा देते है। अपने ऐश्वर्य के चिन्ह शंख, चक्र, गदा, पद्म, कौस्तुभ मणि सबको आज्ञा देते है, जाओ बैकुण्ठ धाम लौट जाओ और अकेले पीपल की जड़ों पर माथा टेके प्रतीक्षा करते हैं– जरा आये (पिछले अवतार की निष्कृति लेने बलि आये) अभिमानी यदुबकुल का यह शरीर आबिद्ध हो। यह अकेलापन व्यास का अकेलापन है, जो अपने आगे अपने ही रोपे गए पौधे उन्मूलन देखते है और इतना बड़ा ग्रंथ महाभारत लिखने के बाद अरण्यरूदन करते हैं।'[9]

मिश्र जी देवी–देवताओं के पौराणिक स्वरूप का वर्णन करते हुए लिखते है। अपने निबन्ध में शिव के बारे में कहते हैं– ''शिव हमारे जातीय उल्लास के देवता हैं। हम अपने उल्लास के क्षण में सबका मंगल चाहते है। शिव का स्मरण करने मात्र से मृत्यु भय नही रह जाता, यह बेला परम शक्ति क्षण बन जाती है, सारा ऐश्वर्य एक और शिव के के अंग में लिपटी राख का एक कण एक ओर।''[10]

विश्वविख्यात कुम्भ पर अपने विचार व्यक्त करते हुए मिश्र जी पौराणिक कथाओं का उदाहरण देते हुए लिखते है ''पौराणिक कथाओं में अमृत कुम्भ की उत्पत्ति देवासुर संग्राम द्वारा समुद्र मंथन के समय हुआ था। कुछ अमृत कण हरिद्वार, उज्जैन, प्रयागराज और नासिक में गिरे थे। इसीलिए बारह वर्ष के बाद उपरोक्त स्थल पर कुम्भ मेला लगता है। 'कुम्भ, जन, जल आस्था' निबन्ध में कुम्भ की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए लिखते है।

विद्यानिवास मिश्र ने हिन्दू धर्म के व्रत उपवास के उपासना पद्धति और उनसे सम्बन्धित देवी देवताओं का वर्णन अपने निबन्धों में यत्र तत्र किया है। 'माटी के महादेव' निबन्ध में शिव के स्वरूप का वर्णन करते हुए लिखते है– ''शिव नृत्य, संगीत, नाट्य आदि के प्रवर्तक आचार्य हैं। वे नटराज है। कलाधार हैं, सम्भवतः बिना विष पीये, बिना कुण्डलित वासनाओं को शरीर के दुर्ग से बाहर किये और उन्हें निरावरण शरीर का निरीह आवरण बनाने की कला की कोई, गति नही है। काल के डमरू के ताल पर ही कला थिरकती है।''[11]

''पुराणों में अमृत मंथन की कथा आती है, उसका भी अभिप्राय यही है कि अनंत को समस्त सृष्टि के अलग–अलग लोग अलग–2 तत्त्व मथते हैं तो अमृतकलश उद्भूत होता है, अमृत की चाह देवता असुर सबको है, इस अमृत कलश को जगह–जगह देवगुरू वृहस्पति द्वारा अलग–अलग काल बिन्दुओं पर रखा गया, वे जगहें प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक हैं, जहॉ इन्हीं काल बिन्दुओं पर कुम्भ पर्व बारह–बारह वर्षों के अन्तराल पर आता है। बारह वर्ष का फेरा वृहस्पति के राशि मण्डल में घूम आने का फेरा है। वृहस्पति वाक् के देवता हैं। मन्त्र के, अर्थ के, ध्यान के देवता हैं वे देवताओं प्रतिष्ठापक हैं। यह अमृत वस्तुतः कोई द्रव पदार्थ नहीं है, यह मृत न होने का जीवन की आकांक्षा से पूर्ण होने का भाव है।''[12]

हिन्दू धर्म में पुराणों की महती भूमिका है। पुराणों में हिन्दू धर्म संस्कृति के आधार पर्व तीर्थ उपवासों का आदि स्रोत है। वेदों की आत्मा का दर्शन पुराणों में होता है। हिन्दू धर्म की पवित्र पावन नदियों और वहां होने वाले तीर्थो की महत्ता को बताते हुए मिश्र जी अपने निबन्ध 'हिन्दू धर्म तीर्थ और पर्वोत्सव' में लिखते है– निरन्तर नदियों के किनारे, नदियों के उद्गम संगमों के पास लोग इस आशा से आते रहे कि यहॉ पवित्र जीवन के लिए प्रेरणा मिलेगी, पवित्र भावना वाले व्यक्तियों के संगम से पवित्रता की नयी अनुभूति मिलेगी। पुराणों में इन तीर्थों की महिमा,

भू भाग की विशेषता इनके जल की शक्ति और मुनियों द्वारा इनके सेवन के कारण हुई। प्रकृति का सौन्दर्य हिन्दू मन को सदा से प्रिय रहा। वह उसके अपने जीवन का सौन्दर्य लगा, इसीलिये उसने हिमालय को देवात्मा के रूप में देखा। नदियों को देवियों के रूप में देखा और अरण्यों को पुण्य वन के रूप में देखा, और उनमें भी उन स्थानों को विशेष प्रिय माना जहॉ पूर्वजों ने निरन्तर तप किया। जहॉ देश के कोने–कोने से विचरण करके आये हुए यातत्मा मुनियों के एक साथ समागम रहे और उस समागम से धर्म के शरीर का परिमार्जन होता रहा।[13]

भारतीय संस्कृति का आधार तीर्थो का वर्णन वामन पुराण में प्राप्त होता है जिसमें आत्म तीर्थ की विशेषता बताते हुए लिखा गया है–

आत्मा नदी संयम पुण्यतीर्थ सत्योदमा शीलशमादि।

तस्याद्नातः पुण्यकर्मापुनाति न वारिणा शुद्धयति चांतरात्मा।।[1] वामन पुराण, 43–25

तीर्थ वह है जिसमें संयम का जल लहराता है, सत्य की धारा बहती है, शील उसके तट के बॉधे रहते है उसमें दया की लहरें उठती रहती है।[14]

निबन्धकार ने अपने पारिवारिक सामाजिक परिवेश से अपने धार्मिक ग्रंथो से जो तीर्थों के बारे में ज्ञान अर्जित किया उसे निबन्धों के माध्यम से सभी को बाटने के लिए अपने विवेक से तीर्थो को नये ढ़ग से व्यक्त किया। तीर्थ हिन्दू जन मानस के अंग है, जहां कही पूर्वजों ने जन्म लिया और अपने कर्म के माध्यम से जन मानस को प्रेरित किया वहीं तीर्थ बन गए। पुराणों में इन तीर्थ स्थानों नदियों का वर्णन है–

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिंन्धुकावेरिजलेस्मिन् सन्निधिं कुरू।।[15] वामन पुराण, 34–35

हिन्दू धर्म में प्रवृत्ति को विशेष महत्व है। नदियों, वृक्षों, पर्वतों आदि को पूजनीय मानकर उनकी आराधना की जाती है। पुराणों ने हिन्दू संस्कृति में पूजनीय सप्त पर्वतों, सप्तपुरीयों का भी वर्णन है। कूर्म पुराण में सप्त पर्वतों के नाम आते है–

महेन्द्रो मलयः सह्यः शक्तिमान् ऋक्षपर्वतः।

विन्ध्यश्च पारिपात्रश्च सप्तात्र कुलपर्वताः।।[16] कूर्म पुराण 1/17/23–24

पुराण और इतिहास जो प्रायः एक ही मान लिए जाते है। कई विद्वान पुराणों को इतिहास की संज्ञा देते है। इस पर निबन्धकार अपना विचार प्रकट करते हुए लिखते है– ''हमने अपनी भाषा में दो शब्द अलग–अलग रखे थे पुराण और इतिहास। इतिहास का अर्थ यह था कि इति ह आस (ऐसा होता आया है)। इस बात की पुष्टि करता है कि ऐसी घटना हुई है और छाप छोड़ गई है लेकिन वह इतिहास तिथ्यंकित इतिहास है। महाभारत में जगह–जगह इस सम्बन्ध में एक इतिहास मिलता है ऐसा उल्लेख मिलता है (खासकर शान्ति पर्व और उसके उपपर्वो में कई बार आती है कि इस सम्बन्ध में यह इतिहास मिलता है)।...... पुराण का और व्यापक आयाम है। पंच लक्षण पुराण कहे गए है, कुछ दस लक्षण पुराण कहे गए हैं। भागवत के इस लक्षण की बात कर रहा था तो उसमें आया है सर्ग,

विसर्ग, पोषण, अनुग्रह, मन्वंतर ईश कथा, वंशानुचरित, निरोध, मुक्ति, आश्रय अब इतने सारे घटनाओं का लेखा–जोखा यहॉ है। पुराण को समझने के उपायों का लेखा–जोखा है। विश्व दृष्टियों का लेखा–जोखा है– उसमें मनुष्य का इतिहास भी है।[17]

मिथक और पुराण एक न होकर दो है। मिथक में मनोरंजन की प्रमुखता रहती है और पुराण में जीवन को समर्थवान बनाने की नई परिस्थितियों में एकरस होने की प्रेरणा मिलती है। ऐसी ही प्रेरणा राधा के प्रेम और त्याग से मिलती है। देवी पुराण की कहानी है कि ''राधा उस हिरण्यमयी सीता का प्रतीक है, नया रूप है जिसके अश्वमेघ यज्ञ की समाप्ति के पश्चात् विदा होने से इनकार कर दिया कि मैं विदा नहीं होऊॅगी। तुम्हारा साथ दिया ऐसे गाढ़े में और अब मैं नहीं जाऊॅगी। तुम मुझे अलग नही कर सकते हो। उसने बहुत जिद की तो राम ने कहा कि अगले जनम में तुम राधा होगी। अर्थात् मूर्तिमयी सीता की भावना, एकनिष्ठ प्यार का सत्व, वही तो मूर्ति है, वही सीता की भावना है राधा वही है।''[18]

शब्दों के नये अर्थ गढ़ने में प्रवीण निबन्धकार विद्या निवास मिश्र अपने निबन्धों में वेद पुराण से उदाहरण लेकर अपनी नयी शब्द शक्ति को ओर पुष्ट करते है। निबन्ध 'लोक और लोकातीत' में लोक शब्द को विभिन्न अर्थो में परिभाषित करते है और विष्णु पुराण का श्लोक उसके लिए प्रयोग करते हुए लिखते है–

विष्णु पुराण ने इस श्लोक को कमल के रूप में देखा है, विभिन्न देशों को पटल के रूप में– भारताः केतु मालाश्च भद्राश्वाः कुरवस्तथा पत्राणि लोक पदमस्य' (चि.पु., 2/2/39)।

पुराणों में सृष्टि निर्माण की जो अवधारणा है। उसको प्रस्तुत करते हुए मिश्र जी लिखते है– पुरूष का केवल एक चौथाई हिस्सा दृश्य संसार है जिसमें नदी–पर्वत, पेड़–पौधे, प्राणी, पॉचों तत्व, मरण धर्मा जीव से सब हैं। परन्तु इसका तीन चौथाई हिस्सा तो द्युलोक, प्रकाश लोक में पड़ा हुआ है, वह अमृत है वह अजय है, वहॉ मृत्यु नहीं जरा नहीं। वहॉ अक्षर ज्योति बहती रहती है, उसी परम पुरूष से विराट पुरूष उत्पन्न हुआ, साकार सृष्टि बड़ी हुई। इस विराट का भी और अधिक व्यक्त रूप उत्पन्न हुआ, वही अधिपुरूष है, प्राणी सृष्टि का वही जीव जन्तु है। यही अधिपुरूष जीवनधारियों में समान रूप से अभिव्याप्त प्रकाश है, यही पूर्ण अहंता है, यही ईशान या ईश्वर तत्व है।[19]

पदम् कहने के पीछे अभिप्राय है कि जैसे कमल सूर्य के आलोक में प्रस्फुटित, पूर्ण रूप से अभिव्यक्त होता है वैसे ही यह पृथ्वी लोक भी ब्रह्माण्ड की दिव्य शक्तियों से ऊर्जा ग्रहण करता है और विकसित होता रहता है। उसमें नश्वरता भी है, नैरंर्त्य भी है।''[20]

पुराणों ने हिन्दू धर्म को मानव मूल्य, प्रकृति प्रेम, सत्यनिष्ठा का ज्ञान दिया। हिन्दू धर्म में फैल रहे अनाचारों छुआछूत को दूर करने, प्रकृति की रक्षा और उसका सम्मान और उसे सुरक्षित रखने के लिए प्रेरणा, आत्महीनता से मुक्ति दिलाने का संकल्प, मानव धर्म पर विजय पाने का मार्ग पुराण दिखाते हैं।

पुराणों के अध्येता विद्यानिवास मिश्र पुराणों का ज्ञान और उसका अवलोकन आज के समाज के परिपेक्ष्य में आवश्यक मानते है। उनका मानना है कि पुराणों में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना है जिससे आदमी अकेलेपन से

जुझते हुए जीवन को सुन्दर बना सकता है। वह लिखते है कि– ''आप पुराणों में भारत की परिकल्पना पढ़िये। वह परिकल्पना आप पढ़ेगे तो ऐसा लगेगा कि भारत की कोई सीमा ही नहीं– कई द्वीपों में एक द्वीप था जम्बूद्वीप। जम्बूद्वीप में एक भारत वर्ष है। उसके कई नाम है। कई जनपद है। कई प्रदेश है।...... जब भारत नाम आता है तब इसका क्या अर्थ होता है? सबसे पहले वैदिक वाड.मय में भारत की व्युत्पत्ति मिलती है। 'भरत' अग्नि का उपासक देश, भारत के वंश में उत्पन्न नहीं? भरत अग्नि के उपासक जो ऊर्जा सबका संभरण करती है, सबका संभरण करने का जो विचार को वह भारत और हिन्दुस्तान के विचारकों ने भी बहुत्व की चिन्ता नही की, हमेशा सर्व की चिन्ता की।''[21]

मिश्र जी के अनुसार पुराण कथाए सामान्य जन को अपनी संस्कृति से जोड़ने तथा उसको जीवन्त बनाये रखने, जीवन को त्याग प्रेम, सहानुभूति करूणा आदि मानवीय मूल्यों को सबको एकता के सूत्र में बाधने का कार्य करते है। मिश्र जी ने पुराणों के माध्यम से पाठकों को भारतीय संस्कृति से परिचित कराकर उसकी प्रतिष्ठा को बढ़ाने तथा उसका महात्म्य स्थापित करते है। पुराणों की कथाओं तथ्यों को अपने निबन्धों में स्थान देकर मिश्र जी जन मानस के हृदय को छू लेते हैं।

उनके निबन्धों में लौकिक साहित्य के तत्व होने पर भी उसमें नवीनता बनी हुई है वह आज भी बहुत प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. स्वामी विवेकानन्द हे हिन्दू राष्ट्र इतिष्ठत! जगृत!!, संकलनकर्त्ता एकनाथ रानाडे, अनुवादक, देवेन्द्र स्वरूप अग्रवाल, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ
2. विकिपीडिया
3. भारत के लोक और शास्त्र (भारतीयता की पहचान), विद्या निवास मिश्र : वाणी प्रकाशन पृ0 51
4. वीकिपीडिया
5. पौराणिक सन्दर्भ कोश : डा0 एन0पी0 कुट्टन पिल्लै पृ0 448–49
6. वही पृष्ठ
7. संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास : डॉ0 राधा बल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ0 76–77
8. देवलोक देवदत्त पटनायक के संगः देवदत्त पटनायकः पेंगुइन रैंडम हाउस इण्डिया, पृ0–14
9. नदी, नारी और संस्कृति : विद्यानिवास मिश्र, पृ0सं0 101
10. फागुन दुई दिना रे : विद्यानिवास मिश्र पृ0सं0 73
11. अग्निरथ : विद्यानिवासी मिश्र पृ0सं0–61
12. शेफाली झर रही है : विद्यानिवास मिश्र पृ0सं0 47–48
13. साल भर पर्व : विद्यानिवास मिश्र पृ0सं0 19

14. हिन्दू धर्म : जीवन में सनातन की खोज, विद्यानिवास मिश्र पृ0सं0 120
15. वही पुस्तक, पृ0सं0 121
16. वही पुस्तक, पृ0सं0 121
17. क्या पूरब क्या पश्चिम : विद्यानिवास मिश्र पृ0सं0 99–100
18. वही पुस्तक, पृ0सं0 102
19. तमाल के झरोखे से : डॉ0 विद्यानिवास मिश्र, पृ0सं0–56
20. क्या पूरब क्या पश्चिम : विद्यानिवास मिश्र पृ0सं0–110
21. अग्निरथ, पृ0सं0–96